International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 4; July 2017; Page No. 874-876

पर्यावरण दृष्टि से वैदिक साहित्य में जल प्रदूषण की अवधारणा

सुनील दत्त
शोधच्छात्रा, पी०एच०डी०, संस्कृत विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू और कश्मीर, भारत।

प्रस्तवना

पर्यावरण शब्द परि+आ+वृ धातु से निष्पन्न हुआ है जिसका अर्थ है वातावरण। यह वातावरण हमारे चारों ओर होने वाले घटना क्रम को प्रभावित करता है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि मनुष्य जहाँ रहता है उसके आस–पास का वातावरण उसके जीवन को प्रभावित करता है। यह सब पर्यावरण है अतः यह पृथिवी तथा इस पर पाये जाने वाले वन, वृक्ष, पुष्प, फल, पर्वत, नदी, निर्झर, सरोवर, समुद्र आकाश, जल पृथिवी, वायु, प्रकाश, पशु तथा पक्षी सब पर्यावरण के अन्तर्गत आ जाते हैं। मनुष्य तथा उसकी संस्कृति का विकास धीरे–धीरे हुआ है। विकास के प्रारम्भ में मानव प्रकृति पर निर्भर था परन्तु जैसे–जैसे उसने कृषि विकसित कर अपना भोजन स्वयं उगाने का उद्यम किया वैसे–वैसे वह प्राकृतिक नियमों में दखल देने लगा। जंगलों को काट–काटकर कृषि योग्य भूमि बनाई गई। विकास की यह गति जैसे–जैसे अग्रसर हुई उससे प्रकृति से अधिक छेड़–छाड़ हुई। मानव ने आरम्भिक काल में सृष्टि के रहस्यों को समझने का प्रयास शुरू किया।

पर्यावरण असंतुलन से जुड़ी समस्या है प्रदूषण की। प्रदूषण का तात्पर्य है जल, थल तथा वायु में अवांछित एवं हानिकारक पदार्थों का सम्मिलन। वांछित तथा उपयोगी पदार्थों की कमी। अवांछित तथा अशिष्ट पदार्थों के पैदा होने तथा एकत्रित होने से जल, भूमि तथा वायु पर दूषित प्रभाव पड़ता है। इससे जड़–चेतन के स्वास्थ्य, सुरक्षा एवं कल्याण पर बुरा प्रभाव पड़ता है। पर्यावरण संतुलन तथा संरक्षण की समस्या मानव को ही सुलझानी है क्योंकि पर्यावरण और मानव का गहरा सम्बन्ध है।[1]

ऋग्वेद में मुख्य रूप प्रकृति को ही देवी मानकर स्तुति की गई है। वैदिक ऋषियों ने प्रकृति को माना है इसलिए भूमि को माता एवं मैं उसका पुत्र हूँ इस प्रकार कहा है।[2] पृथ्वी ही सम्पूर्ण भोगों की उत्पादकता है। वेदों में वृक्षों के महत्त्व का सर्वाधिक उल्लेख किया गया है। इसलिए वृक्षों में देवताओं का निवास माना गया है तथा इनको न काटने पर बल दिया है। वाराह पुराण में तो पेड़–पौधों और वनस्पतियों के रोपण–पोषण तथा संवर्धन को पुण्य कार्य माना गया है एवं कहा है कि जो व्यक्ति अपने जीवन काल में एक पीपल, एक नीम और एक वरगद का पेड़ लगाए, 10 फूलों वाले वृक्षों तथा लताओं का रोपण करे। अनार, नारंगी और आम के दो–दो वृक्ष लगाए वह कभी भी नरक में नहीं जाता है। प्रकृति को धर्म से जोड़कर यह व्यवस्था की गई है कि व्यक्ति प्रकृति का विनाश न करे।[3]

पर्यावरण की शुद्धता के लिए वेदों में यज्ञ का बहुत महत्त्व प्रतिपादित किया है ऋषियों ने यज्ञ को धर्म से सम्बद्ध कर दिया है। प्रकृति में होने वाले विकार की मात्रा को दृष्टिपथ में रखते हुए उन्होंने यज्ञ की मान्यताओं को भी निश्चित कर दिया। यज्ञ वातावरण के एक सीमित क्षेत्र को शुद्ध करते हैं अर्थात् यज्ञ से उत्पन्न धुएँ से नाइट्रोजन तथा अमोनिया उत्पन्न होकर वातावरण की कार्बन डाइआक्सॅाइट को नष्ट करके वातावरण को शुद्ध करता है।

वैदिक साहित्य में जल को पवित्र तथा पुण्य माना है जल ही प्राण है सम्पूर्ण प्राणियों, वनस्पतियों में है अतः इसे परम इस कहा गया है। यह सभी प्राणियों में प्राण का संचार करने के कारण प्राण कहलाता हैं प्राणियों की उत्पत्ति में प्रायः सभी दार्शनिक सिद्धान्त प\च महाभूतों की अवस्थिति को स्वीकार करते हैं। पृथ्वी, जल, तेज, वायु तथा आकाश इन प\चमहाभूतों में जल को मनुष्य को साक्षात् जीवनदायक तत्त्व माना है वैदिक ऋषियों का स्पष्ट रूप से मानना है कि जल में ही अमृत का वास है और उसमें औषधियाँ विद्यमान हैं – अपस्वन्तरममृतमप्सु भेषजम्।[4]

शतपथ ब्राह्मण में तो जल को स्पष्टतः प्राण रूप ही कहा गया है।[5] इसी तरह ऐतरेय ब्राह्मण में कहा है कि इस संसार में जो अमृत है वह जल ही है।[6] वास्तव में प्रकृति–प्रदत्त साधनों में से जल का एक विशिष्ट साधन है। जल से ही संसार की उत्पत्ति है और जल में ही संसार विलीन भी हो जाता है। जल के बिना जीवन सम्भव नही है। अथर्ववेद में कहा गया है कि पृथ्वी सृष्टि से पूर्व जलधि रूप में समुद्र में विद्यमान थी[7] हमारी मातृभूमि आलस रहित होकर हम लोगों को दिन–रात जल रूपी दूध प्रदान करती है –

> यस्मापः परिचराः समानीरहोरात्रे अप्रमादं क्षरन्ति।
> सा नो भूमिर्भूरिधारा पयो दुहामथो उक्षतु वर्चसा।।[8]

ऋग्वेद में जल का महत्त्व बतलाते हुए कहा गया है कि सूर्य की किरणों से जल वृष्टि के द्वारा जल प्रवाहित होता है जिसके द्वारा सभी दिशायें प्रसन्न होती हैं एवं इसी से सम्पूर्ण विश्व को जीवन प्राप्त होता है।[9] यहाँ पर जलीय–पर्यावरण के अन्तर्गत जल–तत्त्व से सम्बद्ध उन विषयों का विवेचन करना अनिवार्य है जहाँ जल–तत्त्व किसी न किसी रूप में विद्यमान होता है। मानव शरीर में लगभग 2/3 भाग जल होता है। मनुष्य रक्त में भी 2/3 भाग जल ही है। सामान्यतः वृक्षों में भी 40% होता हैं जलीय पादपों में यह भाग 90% तक होता है। शुद्ध जल में 2/3 भाग हाइड्रोजन तथा 1/3 भाग ऑक्सीजन होता है। वृष्टि जल में आक्सीजन की मात्रा अधिक होती है।

बदलों में विद्यमान जल प्रायः प्रदूषण रहित होता है, किन्तु जब वही जल वायुमण्डल से पृथ्वी पर आता है तो अनेक प्रकार की गैसों अथवा धूलकणों से युक्त होकर प्रदूषित होने लगता है। कठोपनिषद् में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि वर्षा का जल पूर्णतः शुद्ध होता है तथा वह अशुद्ध जल में मिल कर उसी तरह का बना रहता है।[10]

ऋग्वेद में जल प्रदूषण का वर्णन करते हुए प्रार्थना की गई है कि सुखमय जल हमारी अभिप्सित प्राप्ति के लिए एवं कल्याणकारी हो। वह जल हमारे ऊपर सुख समृद्धि की वर्षा

करे।[11] प्रकृति ने यद्यपि भूमि में बहुत अधिक मात्रा में जल दिया है किन्तु उसमें भी अधिकतर क्षारीय है जिसका हम सही ढंग से उपभोग नहीं कर पाते हैं। इसी तरह वर्षा के जल का समुचित उपयोग भी हम नहीं कर पा रहे हैं। यदि वातावरण स्वच्छ होगा तो वर्षा से प्राप्त जल भी हमारे लिए अधिक से अधिक उपयोगी बन पाएगा। वैदिक ऋषियों ने वर्षा के जल को अत्यधिक बताते हुए उसके सरंक्षण की ओर भी हमारा ध्यान आकृष्ट किया है। अथर्ववेद में वृष्टि विज्ञान का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि सूर्य की किरणों से वाष्पीकृत जल पवित्र होकर पर्जन्य वर्षा के रूप में हमारे सत्कर्मों को बढ़ाने वाला होता है और यज्ञ को सफल बनाता है यथा –

अमूर्या उप सूर्ये याभिर्वा सूर्यः सह।
ता नो हिन्वन्त्वध्वरम् ।।[12]

ऋग्वेद में वृष्टि की देवता के रूप में स्तुति करते हुए कहा गया है कि वर्षा का पुष्टिवर्धक रस हमें शीघ्रता से प्राप्त हो क्योंकि उस पर जीवन तथा विभिन्न प्रकार की औषधियाँ, वनस्पतियाँ और अन्न आदि पदार्थ निर्भर होते हैं।[13] अथर्ववेद में मनुष्य को निर्देश करते हुए कहा गया है कि मानव को अपने घर के समीप जलाशय का निर्माण करवाना चाहिए अथवा दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते है कि उसे अपना निवास जलाशय के पास बनाना चाहिए जो कि अनेक प्रकार के रोगों का नाश करता है।[14]

अथर्ववेद में ''आपो देवता–सूक्त'' जल के उपयोग एवं संरक्षण के रूप में वर्णित हैं जिसमें जल से सम्बन्धित 'नदी', 'वारि', 'आप' और 'उदक' आदि शब्दों का निर्वचन किया गया है। उसी सूक्त में जल के महत्त्व को प्रकाशित करते हुए कहा गया है कि जल के उचित प्रयोग से मनुष्य में बल, तेज, दृष्टि और श्रवण शक्तियाँ बढती हैं क्योंकि जल कल्याणकारी है वह धृत अर्थात् तेज प्रदायक है जिसे अग्नि और सोम पुष्ट करते हैं। वह जल मधुरता से पूर्ण और तृप्तिदायक होकर हमें प्राण और वर्चस के साथ प्राप्त हो।[15] इसी सूक्त के अन्य मन्त्र में जल को मनुष्य को देखने, सुनने और बोलने की शक्ति प्रदान करने वाला बताया गया है ऐसे जल का सेवन करने मात्र से मनुष्य को अमृत के समान संतुष्टि प्राप्त होती है यथा –

आदित् पश्याम्युत वा शृणोम्या मा घोषो गच्छति वाङ्मासाम्।
मन्ये भेजानो अमृतस्य तर्हि हिरण्यवर्णा अतृपं यदा वः।।[16]

अथर्ववेद में जल को किस प्रकार उसे प्राप्त करके संरक्षित रखना चाहिए आदि का स्पष्ट उल्लेख किया गया है कि जल स्रोतों में कैसे पानी को एकत्रित करके उसे उपयोग योग्य बनाया जा सकता है। मरुस्थल, रेतीले प्रदेश अथवा कम वर्षा होने वाले प्रदेशों में उपलब्ध जल को धन्वन्या, अनूप्या अर्थात् जलमय प्रदेशों में प्राप्त होने वाला जल, खनित्रिमा अर्थात् खोदकर बनाये गए कुएँ, तालाब, इत्यादि का जल, कुम्भ–आभृता घड़े इत्यादि पात्र में रखा हुआ जल और वार्षिकी अर्थात् वर्षा से प्राप्त जल। वार्षिकी जल को ही अन्य मन्त्र में दिव्या कहा गया है। इन स्रोतो के अतिरिक्त सिन्धु को भी जल संरक्षण का स्रोत मानते हुए इसे नदियों के पर्याय के रूप में स्वीकार किया गया है।[17]

ऋग्वेद में अपनी सुरक्षा हेतु जल से प्रार्थना करते हुए कहा गया है कि जो जल हमें वर्षा द्वारा प्राप्त होता है फिर नदियों में गमन करता है एवं खोदकर कर निकाला जाता है अथवा स्वयं स्रोतों द्वारा प्रवाहित होकर समुद्र की ओर जाता है वह जल हम सब प्राणियों की रक्षा करे।[18] इसी प्रकार के तथ्यों का उल्लेख यजुर्वेद में करते हुए कहा जाता है कि पेय जल, रोग निवारक जल, ऊर्ध्वगामी जल, स्थिर जल, स्रोतों वाले जल, प्रवाहित जल, कुएँ के जल, वर्षा के जल, धारण करने योग्य जल, समुद्र के जल तथा वायु में स्थित जलों के लिए हम आहुतियाँ प्रदान करते हैं।[19]

जल चिकित्सा नामक सूक्तों का अथर्ववेद में प्रथम काण्ड मे चतुर्थ से लेकर षष्ठ सूक्त तक वर्णन किया गया है जिन्हें 'अपांभेषज' भी कहा जाता है। प्रत्येक सूक्त में केवल चार मन्त्र हैं जो कि जल प्रदूषण की दृष्टि से अथवा जल को प्रदूषण मुक्त करने के प्रति संकेत प्रदान करते हैं। एक मन्त्र में जल का वर्णन करते हुए कहा गया है कि ''आम्बयोयन्त्यध्वभिः''[20] अर्थात् नदियों का जल मार्ग से प्रवाहित होता है अतः वह शुद्ध होता है। इसके अनुसार प्रवाह के कारण जल में प्रदूषण की मात्रा कम हो जाती है। परन्तु आधुनिक काल में नदियों के प्रवाहित होने से जल प्रदूषण कम हो रहा है या नहीं? यहाँ यह प्रश्न विचारणीय है। आधुनिक समय में लोग नदियों को इस प्रकार प्रदूषित कर रहे हैं कि मुझे लगता है कि निकट भविष्य में पेय जल दुर्लभ हो जाएगा। नदियाँ मधुर जल वाली होती हैं परन्तु यहाँ उनको आज प्रदूषित करने का कार्य किया जा रहा है जैसे कारखानों के गंदे पानी को, नालियों के पानी को नदी में फैंक दिया जाता है। जिससे नदियों के शुद्ध जल की कल्पना करना असंभव प्रतीत होता है।

अथर्ववेद के एक अन्य मन्त्र में जल को प्रदूषण से रोकने का वर्णन करते हुए कहा गया है कि सूर्य की किरणों से भी जल प्रदूषण को कम किया जा सकता है।[21] इसके अलावा अन्य मन्त्र में इस प्रकार अभिव्यक्त किया गया है कि कुम्भ में भी जल रखने से भी जल का प्रदूषित अंश नीचे चला जाता है और वह जल प्रदूषण से अपेक्षाकृत मुक्त हो जाता है।[22]

अथर्ववेद के पृथिवी–सूक्त नामक सूक्त में भूमि से प्रार्थना करते हुए कहा गया है कि हमारे शरीर के लिए शुद्ध जल प्रवाहित होना चाहिए एवं हमारे शरीर से निकलता हुआ जल हमारे अनिष्ट कर्त्ताओं के पास चला जाए तथा पवित्र कर्त्ता जल हमें शक्ति एवं पवित्रता प्रदान करता है।[23]

अथर्ववेद के अन्य सूक्त में नदियों को सम्यक् प्रवाहमान बताते हुए हिम से उत्पन्न जल प्रवाह से बहने, अनवरत तीव्र वेग से बहने वाले तथा वर्षा द्वारा नदियों के जल को सुखकारी और कल्याणकारी होने की कामना की गई है। यथा–

शं त आपो धन्वन्याः शं ते सन्त्वनूप्याः।
शं ते खनित्रिमा आपः शं याः कुम्भेभिराभृताः।।[24]

स्पष्ट है कि यदि पेय जल को दूषित होने से बचाना है तो हमें वैदिक काल में प्रयोग में लाए गए प्रयोग को अपनाना होगा। यदि आधुनिक समय के परिप्रेक्ष्य में विचार करें तो इस समय हमारे देश के कुछ राज्य भयंकर सूखे की चपेट में हैं महाराष्ट्र का लातूर जैसा जिला जल संकट से बुरी तरह जूझ रहा है। पृथिवी पर 70% प्रतिशत से भी अधिक जल होने के कारण भी आज लोगों को जल हेतु भटकना पड़ रहा है। यहाँ यह प्रश्न चिन्तनीय है क्यों इतना पृथिवी के भीतर जल होने पर भी लोगों को प्यास बुझाने के लिए जल की बूँद–बूँद को तरसना पड़ रहा है? इस विषय मेरा अपना मानना है कि यह समस्या स्वयं मनुष्य द्वारा उत्पन्न की गई है। हमारी भारतीय संस्कृति प्रधान रही है। हमारे देश में मधुर जल वाली नदियाँ

गंगा, यमुना आदि आज प्रदूषण से बुरी तरह ग्रसित है इन नदियों को हमारे यहाँ माँ की संज्ञा दी जाती है। जिनका जल मनुष्य को पवित्र करने का कार्य करता है परन्तु आज के समय में उनका पवित्र जल पीने के योग्य भी नही समझा जा रहा है। हाल में हुए सर्वेक्षण के आंकड़े भी यह प्रमाणित करते है कि इन नदियों में प्रदूषण की मात्र अधिकतर बढ़ गई है। इस प्रदूषण के लिए मानव ही प्रमुख कारण है। जोकि जागरूक होने पर भी इन बातों से अनभिज्ञ बन रहा है। चाहे वह कारखानों से निकलने वाला पानी हो अथवा उसके घरों में निकलने वाला गंदा पानी हो जो नालियों के द्वारा नदियों में फैंक दिया जाता है और उससे नदियों के पेय जल को प्रदूषित किया जाता है। इसके अलावा लोग अपने घरों से कूड़ा भी उठाकर नदियों में फैंक देते है उससे भी जल प्रदूषित होता है। अगर जल को प्रदूषण रहित बनाना है इन प्रदूषित कारणों से जल को बचाना होगा। इसके लिए न केवल राष्ट्रीय स्तर के अपितु अन्तर्राष्ट्रिय स्तर के जल संरक्षण अभियान की आवश्यकता है क्योंकि ऐसी सम्भावनायें अथवा अनुमान लगाये जा रहे है कि अगर भविष्य में तृतीय विश्व युद्ध होता है तो वह पानी पर ही होगा। इसके कुछ ऐसे चिह्न दृष्टिगोचर हो रहे है जिनको हम नकार नहीं सकते हैं। यद्यपि भारत सरकार द्वारा जल संरक्षण हेतु अलग से मंत्रालय की स्थापना की है एवं कुछ स्वयं शासित संस्थायें भी इस कार्य के लिए प्रयासरत है फिर भी इस क्षेत्र में युद्ध स्तर पर कार्य करने की आवश्यकता है। इसके प्रति प्रत्येक व्यक्ति को जागरूक होने की आवश्यकता है क्योंकि तभी हम जल को प्रदूषा मुक्त कर सकते हैं, संरक्षित रख सकते है। इसके वैदिक काल की विधि सबसे कारगर सिद्ध हो सकती है ''क्योंकि जल ही जीवन है'' ये पूर्णतः सत्य है। जीवन की सत्ता, जीवन का सौन्दर्य जल से ही है। चेतन–अचेतन सब प्रकार के अस्तित्व के लिए उपयोगी पदार्थ जल को जीवन इसलिए कहा जाता हैं सूखते हुए पौधे जल सिंचित होने पर हरे–भरे हो जाते हैं। जल के अभाव में मानव का जीना भी दुष्कर होता है।

जल का संरक्षण करने से ही उसका 'अमृत' तत्त्व सुरक्षित रहेंगा। वैदिक ऋषि जिस समय रचना कार्य में लीन थे उस समय प्रदूषण की समस्या न के बराबर थी, परन्तु त्रिकालदर्शी ऋषियों ने अपनी दिव्य दृष्टि से मानव स्वभाव की दुर्बलताओं का ज्ञान हुआ होगा। इसलिए जल संरक्षण का भाव मंत्रों में स्वभावतः यत्र तत्र समावेशित मिलता है।

अतः वैदिक काल से प्रेरणा लेकर जल के स्रोतों को प्रदूषण रहित रखते हुए जल संरक्षण करना होगा तभी जलचक्र सुचारू रूप से प्रवर्तित रहकर सृष्टि का कल्याण सिद्ध करने में समर्थ होगा।

संदर्भ

1. संस्कृत हिन्दी कोश, वामन शिवराम आप्टे, पृष्ठ 128
2. माता भूमिः पुत्रोऽ पृथिव्या। पृथ्वीसूक्त
3. वाराह पुराण 172/39
4. अथर्ववेद 1/4/4
5. आपो वै प्राणाः। शपतथ ब्राह्मण 3/8/2/4
6. अमृतं वा एतदस्मिन् लोके यदापः। ऐतरेय ब्राह्मण 8/20
7. यार्णवेऽधि सलिलमग्न आसीत्। अथर्ववेद 12/1/8
8. अथर्ववेद 12/1/9
9. तस्याः समुद्रा अधि वि क्षरन्ति, तेन जीवन्ति प्रदिशश्चतस्रः ततः क्षरत्यक्षरं तदिवश्वमुप जीवति। ऋग्वेद 164/42 ब्रह्मवर्चस।
10. यथोदकं शुद्धे शुद्धमासिक्तं तादृगेव भवति। कठोपनिषद् 1/15
11. शं नो देवीरभीष्टये आपो भवन्तु पीतये।
    शं योरभि स्रवन्तु नः।।
12. अथर्ववेद 1/4/2
13. तस्मा अरङ्गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ।
    आपो जनयथा च नः।।
14. इमा आपः प्र भराम्यक्ष्मा यक्ष्मनाशनीः।
    गृहानुप प्र सीदाम्यमृतेन सहग्निना।।
15. आपो भद्रा घृतमिदाप आसन्नग्नीषोमौ विभ्रत्याप इत् ताः। तीव्रो रसो मधुपृचामरंगम आ मा प्राणेन सह वर्चसा गमेत्।।
16. अथर्ववेद 3/13/6
17. शं न आपो धन्वन्याः शमु सन्त्वनूप्याः।
    शं नः खनित्रिमा आपः शमु याः कुम्भ आभृताः।।
    शिवा नः सन्तु वार्षिकीः।। अथर्ववेद 1/4/3
18. या आपो दिव्या उत वा स्रवन्ति खनित्रिमा उत वा याः स्वय?जाः।
    समुद्रार्था याः शुचयः पावकास्ता आपो देवीरिह मामवन्तु।। अथर्ववेद 1/4/3
19. अद्भ्यः स्वाहा वार्भ्यः स्वाहोदकाय स्वाहा तिष्ठन्तीभ्यः स्वाहा स्यन्दमानाभ्यः स्वाहा कूप्याभ्यः स्वाहा सूद्याभ्यः स्वाहा धार्याभ्यः स्वाहार्णवाय स्वाहा समुद्राय स्वाहा सरिराय स्वाहा। ऋग्वेद 7/49/2
20. अथर्ववेद 1/4/1
21. अमूर्या उप सूर्ये याभिर्वा सूर्यः सह। अथर्ववेद 1/4/2
22. कुम्भ आभृताः। अथर्ववेद 1/6/4
23. शुद्धा न आपस्तन्वे क्षरन्तु यो नः सेदुरप्रिये तं निदध्मः।
    पवित्रेण पृथिवी मोत पुनामि।। अथर्ववेद 12/1/30
24. अथर्ववेद 19/2/2